'अप्प दीपो भव'

वॉयस ऑफ बुद्धा

Postal Reg. No.-DL(ND)-11/6144/2016-18
WPP Licence No.- U(C)-101/2017-18
R.N.I. No. 68180/98

Date of Publication : 15.09.2017
Date of Posting on concessional rate :
2-3 & 16-17 of each fortnight

मूल्य : पाँच रूपये

प्रेषक : डॉ0 उदित राज (राम राज) चेयरमैन - जस्टिस पब्लिकेशंस, टी-22, अतुल ग्रोव रोड, कनॉट प्लेस, नई दिल्ली-110001, फोन : 23354841-42

Website : www.uditraj.com E-mail: parisangh1997@gmail.com

● वर्ष : 20 ● अंक 20 ● पाक्षिक ● द्विभाषी ● कुल पृष्ठ संख्या 8 ● 1से 15 सितम्बर, 2017

नैनीताल में परिसंघ का दो दिवसीय प्रशिक्षण शिविर

दिनांक 02 व 03 सितम्बर को परिसंघ उत्तर प्रदेश और उत्तराखंड के संयुक्त तत्वाधान में कार्यकर्ताओं का प्रशिक्षण शिविर नैनीताल के शैले हाल में आयोजित किया गया जिसमें मुख्य अतिथि परिसंघ के राष्ट्रीय अध्यक्ष, डॉ. उदित राज ने शिविर का उद्घाटन भगवान बुद्ध और बाबा साहेब डॉ. अम्बेडकर के चित्र पर पुष्प अर्पित कर किया।

डॉ. उदित राज जी ने उत्तराखंड से पहुंचे सैंकड़ों कार्यकर्ताओं को संबोधित करते हुए आज की परिस्थितियों में आरक्षण और सरकार की नीतियों पर जानकारी दी। जिसमें विशेष रूप से सरकारी कर्मचारियों को लेकर, सरकारी विभागों में नौकरियों को खत्म कर वहां ठेका प्रथा से कार्य करवाना आरक्षित वर्ग के लिए एक गंभीर समस्या बताया तथा निजी क्षेत्र में आरक्षण की मांग को लेकर आन्दोलन चलाने को कहा, साथ ही सोशल मीडिया पर सभी को सक्रियता से भाग लेने को कहा।

प्रशिक्षण शिविर में मंच पर डॉ. उदित राज जी के साथ सुशील कमल, नीरज चक एवं हरिशचंद्र आर्य

पहले दिन के दूसरे सत्र में सोशल मीडिया की जागरूकता लाने को कानपुर मंडल अध्यक्ष जीतेन्द्र कमल की टीम द्वारा एक कार्यशाला की गयी। जिसमें सभी कार्यकर्ताओं को फेसबुक, ट्वीटर, यूट्यूब, व्हाट्सएप पर सभी को एकाउंट सम्बन्धी समस्याओं को दूर कराया तथा उसकी उपयोगिता भी समझाया गया। रात्रिभोज के पश्चात रात 10 बजे से 11:30 बजे तक एक विशेष कक्षा रखी गयी।

दूसरे दिन 03 सितम्बर (रविवार) को सुबह भगवान् बुद्ध की वंदना और धम्मदेशना से कार्यक्रम की शुरुआत की गयी। इसके बाद प्रशिक्षण शिविर सत्र में दिल्ली से आये परमेंद्र मांझी द्वारा कैडर की शुरुआत की गई। उ.प्र. महासचिव नीरज चक ने कार्यकर्ताओं को अपने क्षेत्रों में कैडर कैम्प लगाकर समाज के लोगों को जाग्रत करने को कहा। इसके पश्चात प्रदेश महासचिव राजकुमार जी ने भी

शेष पृष्ठ 4 पर

जय भीम !

जय भारत !!

परिसंघ का राष्ट्रीय चिंतन शिविर
30 सितंबर व 1 अक्टूबर को दिल्ली में

30 सितम्बर और 1 अक्टूबर 2017 को मावलंकर हॉल, कांस्टीट्यूशन क्लब, नजदीक पटेल चौक मैट्रो, नई दिल्ली में दो दिवसीय राष्ट्रीय चिंतन शिवर आयोजित किया जा रहा है। इसमें पूरे देश के परिसंघ के पदाधिकारियों, सदस्यों, कार्यकर्त्ताओं व शुभचिंतकों सहित बुद्धजीवियों को आमंत्रित किया जा रहा है। इस चिंतन शिविर में विचार किया जायेगा कि आरक्षण पर आए संकट से कैसे निबटा जाए। आरक्षण समाप्ति की ओर है तो निजी क्षेत्र में किस तरह से आरक्षण लागू कराया जाए। इसके अलावा दलितों पर आए दिन होने वाले भेदभाव व अत्याचार की समस्या से कैसे निबटा जाए, आदि मुख्य विषय हैं। इसलिए आप दो दिवसीय चिंतन शिविर में साथियों के साथ आएं और बैठकर चर्चा में भाग लें। कोई न कोई रास्ता तो निकालना पड़ेगा। हम महसूस करते हैं कि इस समय दलित व पिछड़ा समाज अंधकार में पड़ा है और उसके अधिकारों पर कुठाराघात हो रहा है। जहां भी मैं जाता हूं सुनने को मिलता है कि आरक्षण खत्म हो रहा है सिर्फ कागजों में रह गया है, वास्तव में समाप्त हो जायेगा, यदि अब भी समाज घर से बाहर निकल कर आन्दोलन नहीं करेगा। ये भ्रांतियां हैं कि राजनीतिक सत्ता जब तक न मिले तब तक तो अधिकार नहीं मिल सकते। बाबा साहेब को कोई राजनीतिक सत्ता नहीं मिली थी फिर भी आरक्षण जैसे अधिकार सुनिश्चित कराए। गुर्जर, जाट, पटेल और मराठा आदि ने भी सामाजिक आन्दोलन के जरिये आरक्षण लिया है। हम भी सामाजिक आन्दोलन के जरिये पहले भी आरक्षण बचाए और आगे भी बचाते रहेंगे।

30 सितंबर को दशहरा है। देखना है कि कौन असली अम्बेडकरवादी हैं और कौन मुखौटा लगाने का नाटक कर रहा है। जो लोग बाबा साहेब और गौतम बुद्ध की विचारधारा में विश्वास रखते हैं, देखते हैं कि दशहरा उन्हें आने से रोकता है या नहीं। देखना है कि बाबा साहेब की विचारधारा में ज्यादा ताकत है कि आपको उठा कर लाती है - आपका समाज का दर्द उठाकर लाता है या फिर बहाना होगा कि उस दिन दशहरा है और 1 अक्टूबर को रविवार है। इसलिए फिर मैं अपील करता हूँ कि 30 सितम्बर और 1 अक्टूबर 2017 को मावलंकर हॉल, नियर पटेल चौक मेट्रो, नई दिल्ली में प्रातः 10 बजे मन बना कर आयें और दो दिन चिंतन करें। इस चिंतन शिविर में हॉल इत्यादि की बुकिंग, खाना और जो लोग अपने ठहरने की व्यवस्था नहीं कर सकते उनकी व्यवस्था आदि करने के लिए 500 रु. प्रति व्यक्ति सहयोग राशि के रूप में रखी गयी है। कृपया आने की अग्रिम सूचना कार्यक्रम संयोजक श्री ओम प्रकाश सिंहमार मो.9811358350, श्री संजय राज रा. कोषाध्यक्ष, मो.9654142705, या श्री सुमित मो. 9868978306 को दे।

- डॉ. उदित राज, राष्ट्रीय अध्यक्ष

मीडिया में दलित आ भी जायें तो करेंगे क्या

संजय कुमार

मीडिया में दलितों की भागीदारी और उनके सरोकरों की क्या स्थिति है सब जानते हैं। किस तरह उन्हें आने नहीं दिया जाता या उनके लिए दरवाजे बंद कर दिये जाते हैं। फॉरवर्ड प्रेस के मई 13 के अंक में 'जातीय पैकेजिंग के टी.वी. चौनल' में वरिष्ठ पत्रकार अनिल चमड़िया ने दलितों के मीडिया में आने और उनके प्रवेश पर अघोषित रोक पर लिखा है कि, 'हर साल एक अच्छी-खासी संख्या में पिछड़े, दलित, आदिवासी लड़के-लड़कियां भारतीय जनसंचार संस्थान से डिग्री लेकर निकलते हैं। आईआईएमसी, भारतीय जनसंचार संस्थान में प्रवेश लेने के लिए इस वर्ग के लड़के-लड़कियां परीक्षा देते हैं। फिर कई परीक्षाएं पास करने के बाद वे डिग्री लेती हैं। लेकिन, उसके मीडिया संस्थानों में फिर उनकी योग्यता की परीक्षा शुरू होती है। वह मीडिया संस्थान चाहे सरकारी हों या पूंजीपति के। हर जगह इस वर्ग के युवा अयोग्य करार दिए जाते हैं दरअसल, समाजिक प्रतिनिधित्व की अपनी एक सीमा है और उस पर पूरा समाज आश्रित नहीं हो सकता।'

इस सवाल के साथ कई और सवाल उठते रहते हैं। आखिर क्या वजह है, मीडिया में दलितों के साथ दलित समस्याएं भी अनुपस्थित हैं? अगर मीडिया में दलित आ भी जाये तो करेंगे क्या ? दलित मीडिया में आना नहीं चाहते? दलितों का हो अपना मीडिया यानी वैकल्पिक मीडिया बने ? मुख्य धारा की मीडिया को जनतांत्रिक कैसे बनाया जाय?

मीडिया में दलित और उनके सरोकार ढूंढ़ने पड़ते हैं फिर भी दोनों नहीं मिलते हैं। मिलते भी हैं तो नगण्यता की तरह। आलोचक वीरेंद्र यादव ने 'मीडिया में दलित ढूंढ़ते रह जाओगे' को लेकर कई सवाल उठाये। भारतीय मीडिया के चरित्र को पर्दाफाश करते हुए कहा कि कैसा है हमारा मीडिया? इस मीडिया में मुकम्मल भारत की तस्वीर नही हैं, गांव नहीं है, हाशिये का समाज नहीं है। मीडिया में दलितों के साथ दलित समस्याएं भी अनुपस्थित हैं। आज समाज को समग्र नजरिये से देखने की जरूरत है। दलितों की उपस्थिति के साथ, दलित समाज के आलोचना की जरूरत के लिए भी मीडिया में दलितों की आवश्यकता है। राजनीतिक स्वतंत्रता तो मिली पर सामाजिक जनतंत्र? एक बड़ी चुनौती हमारे सामने है। वह है सामाजिक जनतांत्रिकीकरण का। इसके लिए भारत में सामाजिक जनतंत्र स्थापित करना ही होगा। इसके बिना जनतंत्र का क्या अर्थ?

मीडिया में दलित का मुद्दा इन सारे प्रश्नों से जुड़ा हुआ है। यह महज आरक्षण का या प्रतिनिधित्व का सवाल नहीं है या जनतंत्र को लेकर मीडिया का यह मुद्दा पहली बार नहीं उठा है। संजय कुमार की इस किताब में रॉबिन जाफरी का जिक्र आया है। वे वाशिंगटन पोस्ट के नई दिल्ली में संवाददाता रहे थे और अपनी एक स्टोरी के सिलसिले में वे चाहते थे कि किसी दलित पत्रकार से बात करें। इस सम्बन्ध में उन्होंने पीआईबी से सम्पर्क किया और दलित पत्रकारों का विवरण मांगा। लेकिन एक भी दलित पत्रकार पीआईबी की लिस्ट में उन्हें नहीं मिला। सैकड़ों मान्यता प्राप्त पत्रकार पीआईबी की लिस्ट में है लेकिन देश के एक भी दलित का नाम सूची में नहीं मिलना चौकानें वाली बात थी। उन्होंने इस पर वाशिंगटन पोस्ट में एक लेख लिखा और अपने दिल्ली के पत्रकार मित्र बी.एन.उनियाल से बात की।

उनियाल ने दि पॉयनियर में एक खबरनुमा स्टोरी लिखकर इस समूचे प्रकरण का जिक्र किया। इसके बाद योगेन्द्र यादव ने अपनी सीएसडीएस की टीम के सर्वेक्षण द्वारा इस बात का खुलासा किया कि देश की राजधानी दिल्ली में जो प्रिंट और मीडिया हाउस है वहां निर्णय लेने वाले पदों पर 90 प्रतिशत द्विज समाज के लोग काबिज हैं। बाकी 10 प्रतिशत में दूसरे लोग हैं और किसी भी निर्णायक पद पर दलित या शूद्र नहीं है। इस तथ्य के खुलासा होने से इस पर लंबी बहस शुरू हो गयी, उस वक्त दैनिक हिन्दुस्तान की संपादक मृणाल पाण्डेय ने सर्वे पर जाति तलाशने का आरोप मढ़ते हुए एक लेख लिखा 'जाति न पूछो साधो की।' मीडिया में दलित उपस्थित नहीं है और जब मीडिया में गैरद्विजों की उपस्थिति या दलितों की उपस्थिति का सवाल उठाया गया तो मीडिया के वर्चस्वशाली लोगों द्वारा उसका एक प्रतिकार और प्रतिरोध किया गया। यह तर्क भी दिया गया कि मीडिया मालिकों का किसी तरह का निर्देश नहीं है कि हम दलितों या निम्न वर्गो से आये लोगों की नियुक्ति न करें। अगर योग्य नहीं मिलते हैं तो हम क्या करें ? लेकिन एक उदाहरण मौजूद है, सिद्धार्थ वर्द्धराजन का जो पूर्व में 'हिन्दू' के संपादक थे। वे जब रिपोर्टिंग करते थे तब चेन्नई की एक घटना का हवाला दिया। जिससे इस बात का अंदाजा लगता है कि दलितों की समस्याओं को लेकर अखबारों में कितनी शोचनीय स्थिति है। उन्होंने अपने अनुभव के आधार पर एक घटना का उल्लेख करते हुए लिखा कि एक मेडिकल कॉलेज के दलित छात्रों ने भेदभाव का आरोप लगाते हुए आंदोलन किया और हड़ताल पर चले गये। इसकी खबर एक भी समाचार पत्र में नहीं छपी। दलित छात्रों का प्रतिनिधि अखबारों में गया और उन्हें बताया भी, फिर भी खबर नहीं आयी। वे सिद्धार्थ वर्द्धराजन से मिले, अपनी बातें बतायी।

वर्द्धराजन ने शहर के संस्करण प्रभारी को खबर छापने को लेकर चर्चा की । प्रभारी ने रिपोर्टर भेजने की बात कही। लेकिन रिपोर्टर को नहीं भेजा गया। कई दिन बीत गये लेकिन खबर नहीं आयी। तब उन्होंने अपने सीनियर से रिपोर्टर भेजकर समाचार कवरेज के लिए कहा, इसके बावजूद भी कुछ नहीं हुआ। स्वयं सिद्धार्थ वर्द्धराजन मेडिकल कॉलेज गये और दलित छात्रों के साथ भेदभाव पर पूरी रिपोर्ट तैयार की और छपने के लिए अखबार को दे दिया। वह स्टोरी एक हफ्ते तक नहीं छपी। जब स्टोरी नहीं छपी तो उन्होंने संपादक से कहा। कई दिनों के बाद जब दलित छात्रों का आंदोलन समाप्त हो गया तो वह स्टोरी छपी। सिद्धार्थ वर्द्धराजन ने इस तथ्य की ओर इशारा किया कि स्थिति यह है कि अखबारों में दलित की उपस्थिति तो है ही नहीं और दलितों की अनुपस्थिति के साथ-साथ दलित समस्याएं भी इस तरह से अनुपस्थित हैं।

तमिलनाडु के ही एक अंग्रेजी में जब एक दलित साक्षात्कार देने गया तो उससे सवाल समाज-देश-पत्रकारिता के बारे में न पूछकर यह पूछा गया कि आप किस इलाके से आते हैं? जब उस दलित उम्मीदवार ने अपने निवास के इलाके का नाम बताया तो कहा गया वहां तो अमुक जाति के लोग हैं तो क्या तुम उस जाति के हो! जब दलित उम्मीदवार ने कहा नहीं तो वे जान गये कि ये दलित है। सामने वाला किस जाति-समाज का है? इस तरह से नियुक्ति जात के बारे में सवाल जवाब किया गया। कहा जा सकता है कि यह एक प्रभुत्वशाली प्रवृति व मनोदशा है। यानी जो माईंडसेट है, माहौल है, वह दलित विरोधी है। जो अपने आप एक दर्द है। 1975 के आसपास अमेरिका की पत्रकारिता में ब्लैक की स्थिति बहुत कम थी। इसे लेकर कुछ लोग आगे आये। मीडिया में अश्वेतों की कम उपस्थिति पर चर्चा की गयी। संपादकों की बैठकें हुई। एक आयोग गठित किया गया और तीन साल में उनके अनुपात को बढ़ाना तय किया गया । इसके लिए उन्होंने एक प्रक्रिया अपनाई। कुछ लोगों को विधिवत प्रशिक्षित किये जाने का फैसला हुआ। और फिर एक जर्नलिस्ट टैलेंट सर्च हुआ, यानी मीडिया में ब्लैक के प्रतिनिधित्व के लिए कार्यक्रम बना और नतीजा यह हुआ कि आज कई अखबारों के प्रभारी ब्लैक हैं। लेकिन भारतीय समाज में यह आज भी दिवास्वप्न सरीखा है ।

भारतीय मीडिया में दलित है ही नहीं तो करेंगे क्या? जब सिद्धार्थ वर्द्धराजन दलितों की समस्याओं के लिए स्टोरी करते है और छपती नहीं है तो एकाध दलित को नौकरी मिल भी जाय तो इस तरह का जो मीडिया का व्यवहार है उसका क्या करेंगे? सवाल है कि मीडिया में व्यवस्थागत परिवर्तन का। वैकल्पिक मीडिया की बात होती रहती है, होती रहनी चाहिए और चलती रहनी चाहिए। लेकिन जो मुख्यधारा का मीडिया है उसे हम जनतांत्रिक कैसे बनाये, यह एक बड़ा सवाल है। इस मुख्यधारा के मीडिया में दलित समाज के लोगों की कैसे सम्मानजनक व प्रभावकारी उपस्थिति दर्ज की जाये , यह भी एक बड़ा सवाल है। ग्राउंड लेबल पर यह स्थिति बनी हुई है कि दलित और आदिवासी हाशिये के समाज के लोग हैं। हाशिये के समाज के लोग इन माध्यमों में आते हैं तो उनके साथ भेदभाव किया जाता है। और सबसे बड़ा सवाल यही है कि आ भी जायेंगे तो करेंगे क्या?

हाल ही में एक पुस्तक आयी है 'अनटचेबिलिटी इन रूरल इंडिया' जो भारत के ग्यारह राज्यों के सर्वे पर आधारित है। सर्वे में कहा गया है कि भारतीय समाज में किस-किस तरह से दलितों के साथ आज भी भेदभाव किया जाता है। सर्वे बताता है कि आज भी भारत के 80 प्रतिशत गांव में किसी न किसी रूप में दलितों के साथ अछूत सा व्यवहार किया जाता है। पंचायत में नीचे बैठने को कहा जाता है। मीड डे मील को लेकर भेदभाव किया जाता है। चार में से एक गांव आज भी ऐसे है जिनमें नये कपड़े, छाता लेकर चलने और चश्मा लगाने, जूता पहनकर चलने पर दलितों को रोक है। शहर के दलितों के साथ शायद ऐसा नहीं हो! लेकिन आज भी यह हो रहा है। भारतीय समाज में खासकर दक्षिण भारत में कई ऐसे जगह है जहां पर ढाबों में दलितों के लिए अलग से बर्तन रखे जाते हैं।

यह कहा जाता है कि आज ग्लोबलाइजेशन हुआ है मार्केट तंत्र आया है इससे कुछ सामाजिक समानता आई है। लेकिन जमीनी सच यह है कि आज भी गाँव के बाजार में जब दलित जाता है तो उसके साथ उसकी जातिगत पहचान बनी रहते है । दूसरे लोगों की तरह वह सामानों को अपने हाथ में उठा-उठाकर देखकर खरीद नहीं सकता, उसे दूर से ही दुकानदार को बताना होता है। सर्वे आधारित ये जो तथ्य सामने आ रहे हैं वे आज के ग्रामीण भारत के रोजमर्रा के जीवन का हिस्सा है। यह सच हमारे अखबारों में नहीं छपता। हिन्दी अखबारों में तो बिल्कुल नहीं। हिन्दी अखबारों में दलित तब उपस्थित होता है जब कोई बस्ती या गांव जला दिया जाता है। आज सांप्रदायिकता को तो बड़े खतरे के रूप में पहचाना गया लेकिन उससे भी बड़ा खतरा है दलितों के साथ भेदभाव। यह भारतीय समाज का सच है। अंधेरे भारत का सच है, जो हमारे भारतीय मीडिया में अनुपस्थित है ।

दलित की उपस्थिति होगी तो कुछ संवेदनशीलता आयेगी। कल्पना कीजिए कि न्यूज रूम में 10 में से 9 द्विज समाज के लोग है। अगर 10 में से 9 दलित और शूद्र समाज के लोग हों, तो दलितों के मुद्दे सामने आयेंगे। यह मात्र दलित उपस्थिति का मुद्दा नहीं है बल्कि भारतीय समाज के जनतान्त्रीकरन और समाजीकरण का भी मुद्दा है। परिसंवाद में बहस को आगे बढ़ाते हुए चर्चित दलित चिंतक अरूण खोटे ने दलितों को मीडिया का जनक बताया। इतिहास का हवाला देते हुए उन्होंने कहा कि दलितों की कई उपजातियां भांट/ढोलकची आदि ही सूचनाओं का प्रचार-प्रसार करते थे। इसके बावजूद शिक्षा और संसाधनों से वंचित यह वर्ग अब मीडिया से गायब हो गया है। बात सिर्फ मीडिया में दलितों के प्रतिनिधित्व की नहीं है, बल्कि दलितों के मुद्दों के लिए भी है। आज मीडिया में दलित नदारत हैं। सवाल यह है कि मीडिया में दलितों को ढूंढ भी लिया जाये तो क्या करेंगे। क्योंकि मैने ढूंढे हैं। मिले भी हैं।

80 के दशक को देखें तो उस वक्त का मीडिया सामाजिक सारोकारों का भारतीय मीडिया था। उसमें समाज रहता था। 90 के दशक तक वह बहुत व्यवसायी हो जाता है। दो हजार दशक में आते-आते व्यवसायिक हो जाता है और आज जब हम यह बात करते हैं तो वह बाजार हो जाता है। सामाजिक सारोकार और व्यवसायिक सारोकार में मीडिया की बात करते हैं तब समरस्ता, दर्शन, पाठक और मीडिया दिखता है। आज जो वह रिश्ता है वह, उपभोक्ता और बाजार का है। ऐसी स्थिति में हम क्या बात करें। आज हम यहां बैठे हैं तो लगभग देश के सभी प्रमुख न्यूज चैनलों में एक समाचार चैनल जो इस बीच बता रहा है कि हरियाणा के रोहतक में दो दलितो की बर्बरता से हत्या कर दी गयी। सिर्फ एक चैनल इसे दिखाता है। डी.एन.ए अखबार में होली के दूसरे दिन एक खबर छपती है, होली की पूजा करने गये दलितों पर हमला किया गया।

श्री खोटे ने बात को आगे बढ़ाते हुए कहा कि अमेरिका में जब अश्वेत लोगों को मीडिया में शामिल करने की बातचीत हुई और उसे लेकर व्यापक चर्चा हुयी। सवाल यह है कि हिन्दुस्तान का मीडिया होता तो क्या वह पहल करता। सवाल यह भी है कि फैसले ले भी ले तो क्या होगा। अगर दलित को कोई बड़ा अखबार नौकरी दे भी दे तो वहां जा कर वह करेगा क्या। मीडिया में सिर्फ प्रतिनिधित्व से क्या होगा। सवाल यह है कि मीडिया में दलितो के मुद्दों के लिए जगह है। दुर्भाग्य की बात यह है कि मीडिया में जो भी दलित हैं वे अपनी पहचान छुपाते हैं। अगर वे पहचान सामने रखते हैं तो वे मीडिया में ज्यादा दिन टिक नहीं पाते हैं।

लगभग चार साल पहले एक अध्ययन आया था हिन्दुस्तान के अमीर लोगों को लगा की सबसे ज्यादा टैक्स हम देते हैं। एक अध्ययन आया योजना आयोग का उसमें था कि सबसे ज्यादा टैक्स अदा करने वालों में बीपीएल वाले हैं। जो माचिस की टिकिया से लेकर चावल-दाल खरीदने पर टैक्स देते हैं। आज स्थिति यह है कि अखबार में जो खबर छपती है उसकी

शेष पृष्ठ 3 पर

मीडिया में दलित .....

पृष्ठ 2 का शेष

कीमत तय होती है जो विज्ञापन के स्तर पर तय होती है। खबर तभी छपती है जब तक उसकी कीमत अखबार को मिल नहीं जाती है। मतबल, बाजार के हिसाब से खबरों को छापा और बेचा जाता है।

पत्रकार बनने की जो पुरानी शैली थी। जिससे हम लोग भी निकलकर आये हैं। कहीं-न-कहीं सामाजिक-राजनीतिक आंदोलन से निकलकर आये या जो लोग राजनीतिक-सामाजिक आंदोलन के हिस्सेदार थे। या वे लोग जो संवदेनशील थे। जिन्हें अपनी बात रखने की जरूरत महसूस हुई। लोगों के बीच अपनी बात रखने की जरूरत हुई। उन लोगों ने लिखना शुरु किया। यह जो सामाजिक सरोकार की बात थी, लेकिन जब मीडिया व्यवसायिकता के दौर में पहुंचा तब मीडिया व्यवसायिक होने लगा, डिग्री और डिप्लोमा की बात आने लगी, आज कितने पत्रकारों से उम्मीद करते हैं कि वह सामाजिक संवेदना का साथ दें। वे भागते जाते हैं, अपनी गाड़ी ठीक से स्टैंड पर लगाते भी नहीं है। कार्यक्रम के शुरु होने के पहले ही प्रेस रिलीज मांग लेते हैं। ऐसे लोगों से हम कैसे उम्मीद करेंगे कि वे सामाजिक सरोकार के साथ न्याय करें और पूरे देश के साथ खड़े हो जाये। स्थिति खतरनाक भी है, लेकिन संभावना भी है। एक बात आज स्पष्ट है कि आप संपादक-पत्रकार की जितनी भी आलोचना कर लें, लेकिन कई संदर्भों में यह बेकार किस्म का मामला बनता है। क्योंकि आज कॉर्मिशयल विभाग तय करता है कि अखबार में कितना और क्या छपना चाहिए। अगर कॉर्मशियल विभाग तय कर रहा है कि क्या होगा तो ऐसे में हमें आज की मीडिया को नये संदर्भों में समझने की जरूरत है।

तमाम तरह की पत्रिकाएं निकल रही हैं। महाराष्ट्र में एक सफल दलित अखबार महानायक आज भी निकल रहा है। अनेक प्रयासों को देखने की आवश्यकता है। दलित संदर्भों से तमाम पत्रिकाएं साथी निकाल रहे हैं, लेकिन कहीं-न-कहीं संसाधनों के अभाव में या अन्य कारणों से लोगों तक नहीं पहुंच पा रहा है, इसलिए जब वैकल्पिक मीडिया की बात आती है, तब हमें लगता है कि मुख्य धारा का विकल्प कैसे बना जाये। उनके सरोकार अलग हैं, मेरे सरोकार अलग हैं। मैं उनका विकल्प कैसे बन जाऊं। यह जरूर हो सकता है कि जिस वर्ग को हम संबोधित करना चाहते हैं, उस वर्ग को बाजार के रूप में मुख्यधारा से जोड़ दें और इसमें बहुत जरूरी होता है कि हमें वैकल्पिक मीडिया से एक कदम आगे समानांतर मीडिया को खड़ा करना। इन सभी चीजों को बेहतर ढंग से देखने की जरूरत है।

मीडिया के ऊपर एक गंभीर बहस की जरूरत है। आज की तारीख में हालत यह है कि सामाजिक -राजनीतिक कार्यकर्त्ता अखबार के दफ्तर में रिलीज छोड़ते हैं। लेकिन अखबार के अंदर के मैकेनिज्म को नहीं जानते हैं। खबर छपा तो क्यों, नहीं छपा तो क्यों, और जो दिया था वह क्यों नहीं छपा, जैसा हमने कहा था, वैसा क्यों नहीं छपा। अगर जवाबदेही तय किया जाये तो वह कौन तय करेगा। यह एक महत्वपूर्ण सवाल है और खतरा भी। यह खतरा जनतंत्र के लिए नहीं बल्कि मीडिया के लिए है जो मीडिया के लिए भी आत्मघाती दौर है। अगर मीडिया के साथी सही समय पर नहीं चेते तो शायद आने वाला दौर मीडिया को बद-से-बदतर स्थिति में ले जायेगा, क्योंकि बाजार हावी हो चुका है, और आपका मन-मस्तिष्क पूरी तरह गुलामी की स्थिति में है।

वहीं दलित चिंतक एस आर दारापुरी ने कहा कि दलितों के साथ अब भी भेदभाव बरकरार है। लेकिन यह सब मीडिया में खबर नहीं बनती है, क्योंकि मीडिया भी उसी द्विज वर्चस्व को बरकरार रखना चाहता है। उन्होंने कहा कि मीडिया में दलित नहीं है यह सच्चाई है। तो सवाल यह है कि हम क्या करें। ऐसे में दलित मीडिया को आगे लाने की जरुरत है। जहां तक मीडिया में दलित का सवाल है, तो मीडिया में दलित नहीं है। इस पर रॉबिन जी की पुस्तक पढ़ी है। उस पर एक पूरा चौप्टर मीडिया में दलित क्यों नहीं है के उपर है। काफी विस्तार से लिखा गया है। सच है कि मीडिया को लोकतंत्र का चौथा खम्भा कहा जाता है, उसमें दलित नदारत है, अदृश्य हैं, उनका प्रतिनिधित्व नहीं है, उनकी अपेक्षाएं, दुःख-दर्द मीडिया में नहीं आते हैं। मीडिया द्विजों के हाथ में हैं। वे जैसा चाहते है, लोगों को परोसते हैं और हम लोग उसे पढ़ने के लिए बाध्य हैं, क्योंकि हमारे सामने दूसरा पक्ष देखने-सुनने को मिलता ही नहीं। आजादी के पहले के मीडिया को देखें तो पाते हैं कि थोड़ी जगह दलितों के लिए थी, लेकिन आजादी के बाद दलित एक प्रतिद्वंदी के रुप में खड़े होने लग गये तो उन्हें मीडिया से अदृश्य करने की कोशिश होने लगी है।

सच्चाई यह है कि मीडिया में दलित नहीं है, इसके ऐतिहासिक कारण हैं। वर्तमान में स्पष्ट कारण है मीडिया जिनके हाथ में रहा है और आज जिनके हाथ में है, वे किसी भी कीमत में दलितों को अपनी मीडिया में जगह देने के लिए तैयार नहीं हैं, क्योंकि मीडिया का अपना वर्ग चरित्र होता है, वह अपने वर्ग हित को स्वीकाराना चाहता है, बढ़ाना चाहता है। मीडिया के अंदर कुछ भूले-भटके आ भी गये तो दिखावे के लिए उनको जो काम दिया जाना चाहिए वह नहीं दिया जाता है। दलितों की जो खबरें छपती हैं, जब तक बलात्कार नहीं हो जाता, आगजनी नहीं हो जाती, तब तक मीडिया में खबर नहीं बनती है। हर रोज दलितों के साथ भेदभाव हो रहा है, उत्पीड़न हो रहा है, वह खबर नहीं बनती। बुंदेलखंड में आज भी दलित जाति के लोग जूते पहन कर ब्राह्मणों के घर के आगे से नहीं निकल सकते। सार्वजनिक कुएं से पानी नहीं भर सकते। सरकारी हैंडपाईप से पानी नहीं ले सकते। ये सब मीडिया में खबर नहीं बनती और न ही खबर बनेगी, क्योंकि मीडिया पर द्विज व्यवस्था को सरकारें भी बरकरार रखना चाहती हैं। इसकी उपज मीडिया है। दलितों के साथ मीडिया का सरोकार है, क्योंकि इसमें भी कोई परिवर्तन दिखाई नहीं देता, क्योंकि जाति भेद मजबूती से खड़ा है। गांव में चले जायें वहां साफ दिखेगा। शहरों में छुपे रुप में दिखेगा।

सवाल यह है कि दलित मीडिया में नहीं है तो क्या किया जाना चाहिए। एक बात तो यह है कि जो जगह वैकल्पिक मीडिया की है वह निर्धारित किया जाना चाहिए। बड़े-बड़े निजी अस्पताल-स्कूल आदि बनते हैं, तब सबको अनुदानित दर पर जमीन दी जाती है और शर्ते होती है कि अस्पताल बनता है, तो उसमें बीपीएल परिवारों के लिए चिकित्सा व्यवस्था मुफ्त दी जाये। इसी तरह से मीडिया को प्रिंट पेपर और विज्ञापन सरकार देती है। इन सब को देखा जाय तो सरकार के समक्ष इसे रखा जाय कि ये हमारी खबर नहीं छापते हैं। आप इनको विज्ञापन आदि की सुविधा देना बंद कर दीजिए। दलितों को इस पर सोचना पड़ेगा कि कैसे मीडिया को मजबूर करें, कि हम भी देश में हैं, हम भी टैक्स देते हैं। हम यह भी कर सकते हैं जो अखबार हमारी खबरें नहीं छापती हैं तो उनका बहिष्कार करें। एक सर्वे होना चाहिए कि कौन पेपर दलित विरोधी है फिर उसका खुलेआम बहिष्कार कर देना चाहिए। वैकल्पिक मीडिया का सवाल है तो इस पर ईमानदारी से विचार करना चाहिए। हमारा मीडिया कैसे आए, इस पर चिंतन की जरूरत है। यह जरूरी नहीं कि दूसरे लोग हमारी बात पढ़े। हम इस समय 18-20 करोड़ दलित हैं। उत्तर प्रदेश में तीन-से-चार करोड़ दलित हैं। क्या एक पत्रिका नहीं चल सकती है एक अखबार नहीं चल सकता। मीडिया में दलित क्यों नहीं हैं। इसे बाहरी और अंदरुनी कारणों को हमें ईमानदारी से ढूंढ़ने की जरूरत है। बहस को आगे बढ़ाते हुए प्रगतिशील महिला एसोसिएशन, लखनऊ की राष्ट्रीय उपाध्यक्ष ताहिरा हसन कहती है कि हमें लड़ाई लड़नी होगी और यह लड़ाई दलित के साथ मिलकर लड़नी होगी। सवाल खड़ा करना होगा। दलितों के प्रति जो व्यवहार हो रहा है उसे लेकर विरोध के स्वर उठने चाहिए मुसलमानों के प्रति, अलपसंख्यकों के प्रति, जो भी कुछ हो रहा है इसके खिलाफ हम कैसे लड़ेंगे- यह हमें तय करना होगा और यह सवाल भी हमें अपने आप से करना होगा कि यह जो मीडिया में सवाल खड़ा हो रहा है। क्या उनके नेतृत्व में हम उनकी तरह भोकल हो कर लड़ सकेंगे। हमें यह भी सवाल खड़ा करना है और दलितों के लिए मीडिया में आने के लिए लामबंद तरीके से पहल शुरु करनी चाहिए। हमें मिलकर लड़ना होगा एक वैकल्पिक मीडिया भी होनी चाहिए लेकिन यह नेशनल मीडिया कौन हो, यह भी सवाल खड़ा करने की जरूरत है।

हमारे समाज में कई सवाल है-शेषित उत्पीड़ित जनता के सवाल है और मूलतः मीडिया के जो सवाल है वो अंततः जाकर इस व्यवस्था से कहीं बड़ा सवाल है। जब तक किसी समाज का लोकतांत्रिकरण नहीं होगा, तब तक इस तरह के सवालों के हल नहीं मिलेंगे। श्री किशोर ने कहा कि कहने को तो लोकतांत्रिक व्यवस्था है लेकिन समाजिक बराबरी आज भी दुर्लभ है। कहने को तो मीडिया को लोकतंत्र का प्रहरी, चौथा खंभा, मजबूत स्तंभ का ढांचा कहा जाता है परन्तु इसकी बनावट जातिवादी तथा दलित विरोधी है। निचले तबके, पिछड़े, दलितों को आगे कैसे लाया जाए। आज मीडिया की आंतरिक संरचना कैसी है? आज मीडिया का वास्तविक चरित्र देखा है। हिन्दी मीडिया को मनुवादी बनते देखा है। दलित मीडिया से जुड़ना तो चाहते हैं, लेकिन उन्हें जान-बूझकर इससे दूर रखा जाता है। यदि कोई प्रतिभाशाली और योग्य दलित मीडिया में प्रवेश भी पा लेता है तो उसे शीर्ष तक पहुंचने नहीं दिया जाता, बल्कि उसे बाहर का रास्ता दिखाने के लगातार उपाय ढूंढे जाते हैं। उन्होंने एक समानांतर मीडिया लाने के लिए मुहिम चलाने की जरूरत पर भी बल दिया जो, जनता के प्रतिरोध के स्वर के साथ सक्रिय हो सके।

http://old1.bhadas4media.com/article-comment/12839-2013-07-07-08-28-41.html

***

पानी की छींटें पड़ने पर ठाकुरों ने किशोरी सहित दलितों को पीटा

छपरा। सारण जिले के अमनौर प्रखंड के परशुरामपुर गांव में रास्ते पर लगे पानी का छींटा पड़ने पर दबंगों ने दलितों की जमकर पिटायी कर दी है। इस बर्बरता से करीब छह दलित बुरी तरह जख्मी हो गए हैं। इसको लेकर स्थानीय थाने में 14 लोगों पर एससी, एसटी अत्याचार निवारण अधिनियम के तहत एफआईआर दर्ज किया गया है।

पीड़ितों ने बताया कि परशुरामपुर दियर से रामचंद्र राम का पुत्र पप्पु कुमार राम घास लेकर घर वापस लौट रहा था। इसी रास्ते से रुप सिंह का पुत्र मिथिलेश कुमार सिंह भी आ रहा था। सड़क पर पानी

जमा होने के कारण गलती से मिथिलेश कुमार पर पानी का थोड़ा छिटें पड़ गई। इस बात पर आक्रोशित होकर उच्च जाति के लोगों ने जाति-सूचक शब्दों का प्रयोग करते हुए पप्पु कुमार राम की जमकर पिटाई कर दी। इसके बाद दलित बस्ती के लोगों ने जब घटना का विरोध किया तो उनकी भी गोलबंद होकर जमकर पिटाई कर दी गई। इसके बाद करीब दो बजे राजू राम की पुत्री जब मजदूरी मांगने गई तो राकेश सिंह व अरुण सिंह ने अभद्र व्यवहार करते हुए उसकी भी पिटाई कर दी। कई दलितों के झोपरीनुमा घर भी उजार दिया गया है।

घटना के बाद दलितों में भय व्याप्त हो गया है। इस घटना में छह दलित घायल हो गए है। इन सभी दलितों का इलाज अमनौर पीएचसी में किया जा रहा है। इसके बाद पप्पु मांझी के बयान पर स्थानीय थाने में रुप सिंह, मिथिलेश सिंह, राहुल सिंह, रत्नेश सिंह, मनु सिंह, राकेश सिंह, अरूण सिंह, रणवीर सिंह, कन्हैया सिंह, बिट्टू सिंह, रामदरन सिंह, जितेन्द्र सिंह, शेरु सिंह, साहेब सिंह समेत 14 लोगों के खिलाफ प्राथमिकी दर्ज की गई है। इस बावत थानाध्यक्ष से पुछे जाने पर उन्होंने बताया कि आरोपियों की गिरफ्तारी के लिए छापेमारी की जा रही है और किसी भी सूरत में आरोपियों को नहीं बख्शा जाएगा।

http://www.dalitdastak.com/news/dalits-lynched-in-chapra-bihar.html

***

झारखंड परिसंघ का अधिवेशन संपन्न

10 सितंबर, 2017 को अनुसूचित जाति/जन जाति संगठनों का अखिल भारतीय परिसंघ की झारखंड इकाई का 7वां अधिवेशन प्लाश सभागार, वन विभाग रांची में संपन्न हुआ। पिछले लगभग 2 माह से इसकी तैयारी चल रही थी। अंततः माननीय डॉ. उदित राज, राष्ट्रीय अध्यक्ष, परिसंघ द्वारा सहमति मिलने पर कार्यक्रम को धरा पर उतारा जा सका। अधिवेशन में तकरीबन 16 जिलों के प्रतिनिधियों ने अपना प्रतिनिधित्व किया। इस अवसर को यादगार बनाने के लिए एक स्मारिका 2017 का प्रकाशन किया गया, जिसका विमोचन डॉ. उदित राज जी ने किया।

डॉ. उदित राज जी का स्वागत करते हुए झारखण्ड प्रदेश परिसंघ के पदाधिकारीगण

महिला परिसंघ की राष्ट्रीय संयोजक, श्रीमती सविता कादियान पंवार भी कार्यक्रम में उपस्थित थी। दिल्ली से पधारे हमारे नेताओं द्वारा दलित समस्याओं से लेकर आरक्षण बचाओ का संघर्ष एवं संविधान के रक्षार्थ मुद्दों पर खुली चर्चा की गयी।

इस अवसर पर परिसंघ के कार्यकर्त्ताओं द्वारा अपने-अपने विचार एवं सुझाव को रखे गये। इन सभी बातों का मूल था आरक्षण की लड़ाई को तेज कैसे किया जाए। परिसंघ की शक्तियों को कैसे बढ़ाया जाए। संगठन का वृहत पैमाने पर विस्तार करके बड़ा जनआंदोलन कैसे खड़ा किया जाए। इन्हीं बातों के आलोक में राष्ट्रीय महिला प्रकोष्ठ की प्रमुख श्रीमती सविता कादियान पंवार ने कहा कि कोई भी आंदोलन बिना महिलाओं को साथ लिए सफल नहीं हो सकता । भारत में आज भी पुरूषों ने महिलाओं को सम्मान व अधिकार से वंचित कर रखा है। ऐसे में बड़ी जंग को जीतना मुश्किल है। अतः महिलाओं को संगठन में नेतृत्व का मौका देकर हम अपनी शक्ति को बढ़ा सकते हैं। आंदोलन को तेजकर हम अंजाम तक पहुंचा सकते हैं। राष्ट्रीय अध्यक्ष, डॉ. उदित राज ने हर पहलुओं को छूते हुए कहा कि दलित व पिछड़ों से बड़ा कोई देशभक्त नहीं हो सकता, क्योंकि हजारों वर्षों से शोषितों व वंचितों ने अपना ईमान-धर्म नहीं बेचा। देश के साथ गद्दारी नहीं की। संगठन को सशक्त करने पर जोर देते हुए कहा कि आदिवासियों व दलितों से छीने जा रहे आरक्षण की पूंजी को आगे आकर बचाना होगा। जागरूकता बढ़ानी होगी, इसके बिना दलितों को कोई अस्तित्व नहीं है। घटती नौकरी और निजीकरण से हम प्रभावित होते जा रहे हैं। अतः निजी क्षेत्र में आरक्षण की लड़ाई तेज करनी होगी।

इस अवसर पर झारखंड प्रांत के अध्यक्ष विल फ्रेंड केरकेट्टा ने दलित-आदिवासी एकता को जोड़ने की बात कही। प्रांतीय महासचिव श्री मधुसूदन कुमार ने कहा कि परिसंघ का आंदोलन 1997 से चल रहा है, आंदोलन को हम जीवन के अंतिम दम तक संघर्ष करके निजी क्षेत्र में आरक्षण माननीय डॉ. उदित राज के नेतृत्व में लेकर रहेंगें। इस मौके पर सर्वश्री दिनेश कुमार, ए.बी. राम, महेश राम, दामोदर बौद्ध, विनय हेमब्रम, मनीन्द्र कुमार, अजीत भिंज, के. भिंज, वीरेन्द्र पासवान, एच.सी. भगत, एच.बी. राम., संतोष कुमार, देवेन्द्र कुमार, श्रीमती संगीता कुमारी रवि, उर्मिला कच्छप, ऊषा देवी, कपिल राम, रामबली राम, वसंत कुमार, अनिल कच्छप आदि ने सहयोग किया। धन्यवाद ज्ञापन के साथ कार्यक्रम का समापन हुआ।

– मधुसूदन कुमार
महासचिव, झारखंड
मो. 9431187043

***

झारखंड, रांची में सशक्त महिला प्रकोष्ठ टीम का निर्माण

10 सितंबर (रविवार) को झारखंड, रांची का विशाल सम्मेलन पलाश आडिटोरियम, वन विभाग, रांची में यहां के प्रदेश अध्यक्ष श्री मधुसूदन कुमार व उनकी टीम साथ में महिला टीम का नेतृत्व कर रही महिलाओं में श्रीमती संगीता जी, उषा मधुसूदन जी, उर्मिला कच्छप जो कि यहां सेना में महिला बटालियन की अध्यक्ष भी हैं, द्वारा आयोजित किया गया। कार्यक्रम की शुरुआत में बाबा साहब एवं बिरसा मुंडा की प्रतिमा पर फूलार्पण करके हुई। बैच लगाकर और बुके देकर डॉ. उदित राज एवं सविता कादियान पवार जी का सम्मान किया गया । कार्यक्रम मे झारखंड के सभी जिलों से लोगों ने भाग लिया। कार्यक्रम मे झारखंड के पूरे वर्ष की वार्षिक समारिका का विमोचन किया गया। तत्पश्चात सभी ने अपने विचारों से संगठन को आगे बढ़ाने व मजबूत करने पर अपने-अपने विचार रखे। कार्यक्रम के मुख्य अतिथि परिसंघ के राष्ट्रीय अध्यक्ष माननीय डॉ.उदित राज जी ने अपने विचारों से झारखंड रांची के लोगों को झकझोरते हुए उन्हे सिर्फ समस्याओं को बताने के साथ उनको कैसे हल निकालना है व संगठन के प्रति उनकी क्या जिम्मेदारी है वो तय करनी होगी। आज अगर समाज के लिए कोई काम कर रहा है तो वो माननीय डॉ. उदित राज जी हैं। महिला प्रकोष्ठ की राष्ट्रीय संयोजक सविता कदियान पंवार ने कहा की महिलाओं को बताया कि आज काफी राज्यों में महिला प्रकोष्ठ टीम तैयार हो चुकी है और झारखंड में भी काफी महिला साथी यहां महिला प्रकोष्ठ टीम के तहत काम कर रही हैं और यहां की महिला टीम के नेतृत्व में काफी बड़ी संख्या मं महिलाएं सम्मिलित हुई और एक रिकॉर्ड बनाया। यहां काफी महिलाएं परिसंघ महिला प्रकोष्ठ से जुड़ने को आतुर हैं । उर्मिला कच्छप जो महिला बटालियन में अध्यक्ष हैं, वे अपनी महिलाओं के साथ कार्यक्रम में शमिल हुई। झारखंड की महिलाओं की एक विशेषता रही कि इन सभी में एक जबरदस्त आत्मविश्वास है और सभी कार्य अपने अनुसार करने की क्षमता रखती हैं। संगीता जी ने झारखंड की जिम्मेदारी लेने का आह्वान मंच से किया वहीं उषा मधुसूदन जी ने महिला टीम गठन करने की जिम्मेदारी ली। उर्मिला कच्छप ने भी अपने अभिभाषण में मंच से कहा कि अब महिलाएं आगे आकर रहेगीं और अपना दम दिखा कर रहेगीं और बता देगीं कि वे किसी से कम नहीं। महिलाओं में डॉ सुपर्णा बरुआ, रेणू किशोर, सुलभा रवि, सहित काफी संख्या में महिलाओं की उपस्थिति रही। शानदार कार्यक्रम का आयोजन सफल रहा। इसके लिए झारखंड टीम को बधाई।

मंच पर डॉ. उदित राज जी के साथ मधुसूदन कुमार एवं सविता कांदियान पंवार

– सविता कदियान पंवार
राष्ट्रीय संयोजक, परिसंघ महिला प्रकोष्ठ
मो. 9873944026

***

नैनीताल में परिसंघ का.....

पृष्ठ 1 का शेष

सभी कार्यकर्ताओं को प्रदेश के सभी जिलों में कार्यकारिणी गठन करने को कहा।

नैनीताल के जिला अध्यक्ष अर्जुन लाल जी ने सभी कार्यकर्ताओं के स्वागत भाषण में सभी को धन्यवाद किया। आगरा से आये ज़ोन कोआर्डिनेटर राम खिलाड़ी वर्मा जी ने भी सरकारी विभागों में अम्बेडकरी मिशन चलाने के लिए तरीके बताये और आरक्षण की रक्षा और सामजिक सुरक्षा को लेकर अपने विचार रखे।

प्रशिक्षण शिविर को सबोधित करते हुए रा. अध्यक्ष डॉ. उदित राज व मंच पर बैठे वरिष्ठ नेता गण

औरैया (उ.प्र) से आये बलराम चक जी ने भी आंबेडकर मिशन को लेकर अपने विचार रखे। दूसरे सत्र में राष्ट्रीय कोषाध्यक्ष संजय राज और उ.प्र. के कोषाध्यक्ष सुरेन्द्र कुमार ने संयुक्त रूप से सभी को परिसंघ को आर्थिक रूप से सुदृढ़ करने के लिए सदस्यता अभियान चलाने को लेकर गुण सिखाए। इसके बाद खटिक सेना के राष्ट्रीय महासचिव इन्द्रेश चन्द्र सोनकर ने अपने तेजतर्रार भाषण से शैले हाल में जबरदस्त उत्साह मचा दिया।

इसके पश्चात मुख्य अतिथि परिसंघ के राष्ट्रीय चेयरमैन, डॉ. उदित राज जी ने कार्यकर्ताओं को पुनः एक बार संबोधित करते हुए अनुसूचित जाति और जनजाति समाज पर आनेवाली गंभीर समस्याओं के प्रति आगाह किया और कहा की अब सभी को एकजुट होकर इन मनुवादी ताकतों के खिलाफ आवाज उठाना होगा।

अंत में परिसंघ उ.प्र. के अध्यक्ष सुशील कुमार कमल व उत्तराखंड के प्रदेश अध्यक्ष हरिश्चंद्र आर्य जी ने इतने कम समय के नोटिस पर इतनी अच्छी संख्या में लोगों को उपस्थित होने के लिए धन्यवाद दिया। दोनों प्रदेशों का संयुक्त रूप से इतने कम समय में शिविर आयोजित करना एक कठिन कार्य था। लगातार हो रही बारिश तथा भूस्खलन की आशंका को देखते हुए भी इतनी बड़ी संख्या में कार्यकर्ताओं का नैनीताल पहुंचकर शिविर में शामिल होकर इसे सफल बनाने से सिद्ध होता है कि कुछ लोग समाज के प्रति अपनी जिम्मेदारी का किस तरह निर्वहन करते हैं। कार्यक्रम के बाद सभी कार्यकर्ताओं का ग्रुप फोटो सेशन भी हुआ।

– भरत लाल
मीडिया प्रभारी

यूपी के इस गांव में आज भी दलित महिलाएं सिर पर ढो रहीं हैं दूसरों का मैला

लोकेश दूबे
3 मई, 2017

वैसे तो भारत 21वीं सदी का सबसे तेज गति से विकसित होने वाले देशों में सुमार हो चुका है, लेकिन उत्तर प्रदेश समेत कई राज्यों में हाथ से मैला ढोने की कुप्रथा बदस्तूर जारी है। सुप्रीम कोर्ट की सख्त पाबंदी के बावजूद समाज का एक तबका मजबूरी में मैला ढोने को विवश हैं। ऐसा ही एक गांव कन्नौज जिले में है, जहां की दलित महिलाएं दो जून की रोटी के लिए अपने हाथों से दूसरे के मैले को साफ करती हैं। चौंकाने वाली बात यह है कि जिला प्रशासन इस बात से बेखबर है।

कन्नौज की तिर्वा तहसील का अगौस गांव वैसे तो सवर्ण बाहुल्य है, लेकिन यहां कुछ दलित परिवार भी रहते हैं। रोजगार का कोई साधन न होने की वजह से इन दलित परिवारों की महिलाएं दूसरों के घरों का मैला साफ कर अपना जीवन यापन कर रही हैं। ऐसा नहीं है कि समाज के

जागरूक लोगों ने इनकी दुर्दशा की बात जिला प्रशासन तक न पहुंचाई हो, लेकिन इस अमानवीय कुप्रथा को रोकने के लिए आज तक कोई ठोस कदम नहीं उठाया गया।

समाज को बांटने वाली इस कुप्रथा को रोकने के लिए अभी तक कोई सामने नहीं आया है। इन दलितों के पास रोजी रोटी का कोई साधन न होने से ये मैला ढोने को मजबूर हैं। हाथों से दूसरे घरों का मल उठाकर ये दलित महिलाएं टोकरी में भरकर गांव के बाहर ले जाती हैं।

मैला ढोने वाली महिला रामबेटी ने कहा, मैला न ढोयें तो क्या करें, बच्चों का पेट कैसे पालें, उनको कैसे पढाएं, बेटियों की शादी कैसे करें। मजबूरी में ही ये काम करना पड़ता है। यहां चौंकाने वाली बात यह है कि अगौस में चल रही मैला ढुलवाने की परंपरा से कन्नौज प्रशासन पूरी तरह अनजान है। जबकि आस-पास के कई गांवों में मशहूर है कि अगौस के दलित प्रशासनिक लापरवाही के चलते आज भी मैला उठाते हैं। इस बात की जानकारी कई बार गांव के कुछ सभ्य लोगों ने अफसरों तक भी पहुंचाई, लेकिन किसी अफसर ने समाज को बांटने वाली इस कुप्रथा को खत्म करने के लिए कोई कदम नहीं उठाया।

कन्नौज के जिलाधिकारी जगदीश प्रसाद से बात की तो उन्होंने कहा कि यह बात उन्हें हमारे माध्यम से पता चली है। डीएम ने कहा की तत्काल इसकी जांच करवाकर दोषियों के खिलाफ कार्रवाई की जाएगी। जो भी दलित हैं उनके पुनर्वास की भी व्यवस्था होगी।

अगौस गांव में चल रही इस परम्परा से एक बात तो तय है कि समाज में आज भी दलितों के प्रति सोच पूरी तरह से बदली नहीं। यह सभ्य समाज के मुंह पर एक तमाचा भी है। देश के प्रधानमंत्री नरेंद्र मोदी खुले में शौच न करने की अपील करते हैं। प्रदेश के सीएम योगी आदित्यनाथ 2018 तक प्रदेश को खुले में शौच से मुक्त करने की बात करते हैं, लेकिन सिर पर मैला ढोने की परंपरा का आज भी होना यह दर्शाता है कि प्रशासन और अधिकारी इस मुद्दे को लेकर संवेदनशील नहीं हैं।

https://hindi.news18.com/uttar-pradesh/kannauj-news-dalit-women-scavengers-in-kannauj-village-982334.html

***

दलितों को न मिले पीने का पानी इसलिए सवर्णों ने कुएं में मिलाया जहर

कलबुर्गी। कर्नाटक और पी. सिद्दारमैया इन दिनों खूब चर्चा में है। दो दिन पहले कर्नाटक की राजधानी में वरिष्ठ पत्रकार गौरी लंकेश की हत्या कर दी गई। गौरी लंकेश ब्राह्मणवाद और जातिवाद के खिलाफ लड़ने वाली निर्भीक पत्रकार और समाजसेविका थी। आप इस घटना से ही अंदाजा लगा सकते है कि जब एक पढ़-लिखे और जागरूक वर्ग के लोगों के साथ हिंसा हो रही है तो अन्य लोगों के साथ क्या होता होगा ?

गौरी लंकेश की हत्या हुए अभी दो ही दिन हुए है। जातिवादियों एक और घटना को अंजाम दे दिया। मामला बेंगलुरु से 640 किलोमीटर दूर कलबुर्गी के चन्नूर गांव का। जहां जातिवादियों ने एक कुएं में जहर मिला दिया, ताकि इस कुएं के पानी का यहां रहने वाले दलित नहीं पी सके।

इस गांव में सात कुएं हैं, जिसमें से दलित समुदाय के लोगों को सिर्फ एक कुएं से पानी पीने की इजाजत है। यहां के दलितों की जिंदगी कितनी मुश्किल है इसका अंदाजा इसी से लगाया जा सकता है कि जिस कुएं का पानी पीने की इजाजत सवर्णों ने इन्हें दी है वो कुआं इनके घरों से लगभग 200 मीटर दूर है।

दलितों को यहीं से पानी सप्लाई किया जा रहा था। गांव के बाकी कुओं पर सवर्णों का कब्जा है। पहले तो सब कुछ ठीक चला आ रहा था। समस्या की शुरुआत तब हुई जब दलित जिस कुएं से पानी पी रहे थे उस जमीन का लीज एक उच्च जाति के व्यक्ति को दे दिया गया। इसके बाद दलितों को इस कुएं से पानी खींचने की मनाही कर दी गई। जमीन की लीज सवर्ण समुदाय के व्यक्ति को कैसे मिली इसकी पड़ताल हो रही है।

बाद में कुएं में एक मोटर पंप बिठाया गया और इसी के जरिये दलितों के घर तक पानी की सप्लाई की जाने लगी। कुछ दिन पहले महंतप्पा नाम का एक दलित कुएं से पानी लाने गया क्योंकि बिजली ना होने की वजह से कई दिनों से पानी की सप्लाई नहीं हुई थी। लेकिन इस शख्स ने देखा कि कुएं से तेज बदबू आ रही है। इस शख्स ने तुरंत इस बात की सूचना दलित समुदाय के अन्य लोगों को दी। जांच में पता चला कि कुएं के पानी इंडोसल्फान नाम का जहरीला केमिकल मिलाया गया था। पुलिस ने शिकायत के बाद कुएं के मालिक के खिलाफ दलित उत्पीड़न एक्ट की धारा-3 के तहत केस दर्ज कर लिया है।

http://www.dalitdastak.com/news/upper-castes-poisonous-chemicals-dalits-water.html

***

परिसंघ के सदस्य बनें और सोसल मीडिया से जुड़े

डॉ. उदित राज के नेतृत्व में चल रहे ऑल इंडिया परिसंघ की स्थापना 1997 में पांच आरक्षण विरोधी आदेशों की वापिसी के लिए हुआ और तब से लगातार संघर्ष करते हुए अनेको अधिकार सुरक्षित कराए। आगे भी संघर्ष जारी रहेगा। आप परिसंघ के सदस्य बनकर इस आंदोलन को सहयोग कर सकते हैं। आप उपलब्धियों और गतिविधियों की लगातार जानकारी के लिए परिसंघ के सोसल मीडिया एकाउंट www.facebook.com/aiparisangh को लाइक करें। twitter.com/aiparisangh पर फालो करें। All India Parisangh के यूट्यूब चैनल को सब्सक्राइब करें। Whatsapp No. : 9899766443 को अपने फोन में सेव करें और किसी भी जानकारी के लिए parisangh1997@gmail.com पर ईमेल करें। अधिक जानकारी हेतु सुमित मो. नं. 9868978306 पर सम्पर्क करें।

– सत्यानारायण, अध्यक्ष दिल्ली प्रदेश, परिसंघ, मो . 9873988894

डॉ. उदित राज के नेतृत्व में अजा/जजा परिसंघ द्वारा किए गए प्रमुख कार्य

जो कार्य अनुसूचित जाति/ जन जाति संगठनों का अखिल भारतीय परिसंघ पिछले 18 वर्ष में किया है अगर किसी दलित संगठन एवं नेता ने किया हो तो कोई बताने का कष्ट करे। उन कार्यों को विस्तार में न लिखकर संक्षेप में उल्लेख किया जा रहा है। परिसंघ चुनौती देता है कि संवाद या लिखित रुप से हमारे द्वारा किए गए सामाजिक कार्य इतना किसी और ने किया हो? यहां कुछ कार्यों का ही उल्लेख किया जा रहा है।

1. सन 1997 में 5 आरक्षण विरोधी आदेश जारी हुए थे और उनकी वापिसी के लिए अनुसूचित जाति व जनजाति संगठनों का अखिल भारतीय परिसंघ का गठन हुआ था। 1997, 1998, 1999 एवं 2000 में विशाल आंदोलन और रैलियां हुई और जिसकी वजह से 81वां, 82वां एवं 85वां संवैधानिक संशोधन हुआ और आरक्षण बच पाया।

2. 4 नवम्बर 2001 को सरकारी दिक्कतों के बावजूद लाखों लोगों को बौद्ध धर्म की दीक्षा दिलाई । रामराज से उदित राज हो गए, जो ये प्रमाणित करता है कि यह जाति तोड़ने व वास्तविक सांस्कृतिक परिवर्तन का प्रयास था।

3. जब सरकारी नौकरियां खत्म हो रहीं थीं तो निजी क्षेत्र में आरक्षण का मुद्दा हमने उठाया। जब मुद्दे में जान आने लगी, तभी समाज के कुछ नेता घबरा गये और हमारा विरोध करके हमे कमजोर करने लगे। शुरुआत में आंदोलन के दबाव के कारण मनमोहन सिंह जी की सरकार ने निजी क्षेत्र में आरक्षण देने के लिए शरद पवार के नेतृत्व में मंत्री समूह की कमेटी का गठन किया। अगर समाज पूरा साथ देता तो बहुत संभव है कि निजी क्षेत्र में आरक्षण अब तक मिल गया होता।

4. 2006 में जब पिछड़े वर्ग को उच्च शिक्षण संस्थानो में आरक्षण मिला तो उसका विरोध तथाकथित जातिवादी लोग करने लगे। तो परिसंघ ने ही मोर्चा संभाला और अंत में पिछड़े वर्ग को आरक्षण मिला।

5. अमेरिका से लेकर संयुक्त राष्ट्र संघ के मानवाधिकार आयोग में दलितों के उत्पीड़न की आवाज कई बार हमने उठायी।

6. 2006 में नागराज के मामले में सुप्रीम कोर्ट में पैरवी करके प्रमोशन में आरक्षण बचाने का कार्य किया । क्या देश का कोई और संगठन या व्यक्ति है जो उस समय सक्रिय हुआ? अगर डॉ. उदित राज न होते तो शायद प्रमोशन में आरक्षण उसी समय खत्म हो जाता। 85वाँ संवैधानिक संशोधन की वजह से यह विवाद खड़ा हुआ था। संशोधन से लेकर सुप्रीम कोर्ट तक में इस अधिकार को बचाने का कार्य परिसंघ ने ही किया। जो अधिकार डॉ. उदित राज ने दिलाया वह मायावती की सरकार में छिन गया। 4 जनवरी 2011 को प्रमोशन में लखनऊ हाई कोर्ट ने आरक्षण समाप्त कर दिया । हाई कोर्ट के आदेश ने इतना गुंजाइश छोड़ी की यदि राज्य सरकार चाहे तो कुछ शर्तें पूरा करके प्रमोशन में आरक्षण आगे चालू रख सकती है । जैसे राजस्थान की सरकार ने एक समिति बनाकर प्रमोशन में आरक्षण दिया वैसा मायावती सरकार ने क्यों नही किया? सवर्ण वोट की लालच की खातिर मायावती जी स्वयं निर्णय न करके मामले को सुप्रीम कोर्ट भेज दिया और वहां पर हाई कोर्ट के फैसले पर मोहर लग गई। हमने अपनी तरफ से बहुत प्रयास किया कि मुकदमा सुप्रीम कोर्ट न जाएं लेकिन बसपा की सरकार ने एक नही सुनी? क्योंकि परिसंघ ने इस मांग को उठाया था। जरा सोचिए प्रमोशन में आरक्षण की समस्या किसने खड़ी की है?

7. सन 2011 में अन्ना हजारे ने जब लोक पाल बनाने का आंदोलन छेड़ा तो सारा देश दबाव में आ गया था और अकेला परिसंघ ही था कि उसने चुनौती दी कि क्या लोकपाल में दलित-पिछड़े और अल्पसंख्यक भी स्थान पाएगें? उस समय की मांग के अनुसार संसद की कार्यवाही, सुप्रीम कोर्ट, प्रधानमंत्री और सीबीआई तक सभी लोकपाल के अन्दर आने की बात थी। हमने लोकपाल बिल में आरक्षण की बात उठाई तो अन्ना हजारे और अरविंद केजरीवाल ने इसे बनवाने में रुचि ही समाप्त कर दी। मान लिया जाए कि परिसंघ द्वारा अगर अवाज नहीं उठाई गई होती तो लोकपाल बन गया होता। तो संविधान के ऊपर लोकपाल बैठ जाता और इस देश में महिलाओं, दलितों एवं पिछड़ो की हालत खराब हो जाती। हमने बहुजन लोकपाल बिल बनाकर आरक्षण की मांग की और यह मांग पूरी भी हुई।

8. अब तक हमने हजारों कर्मचारियों की नौकरियों को बचाया है व लाखों के तमाम भेदभाव को खत्म करने की पुरजोर कोशिश की, यही कारण है, जब परिसंघ आवाहन करता है तो लाखों लोग इकट्ठा हो जाते हैं। परिसंघ किसी को भी चुनौती देता है की लिखित में कोई बहस कर ले यदि देश में किसी और नेता ने इतना कार्य किया हो तो आलोचना करो, लेकिन गलती तो बताओ ।

डॉ. उदित राज ने जितना दलितों के बारे में संसद में प्रश्न किए हैं, शायद किसी और ने नहीं। कर्मचारी-आधिकारी रिटायर हो रहे है उनके एवज में भी भर्ती नहीं हो पा रही है। बढ़ी हुई जनसंख्या के मुताबिक भर्ती की तो बात बहुत दूर की है। ठेकेदारी प्रथा से आरक्षण लगभग खत्म हो गया है। निजी क्षेत्र में आरक्षण की लड़ाई कमजोर होती जा रही है। पदोन्नोति में आरक्षण की परेशानी बढ़ती जा रही है। चारो ओर अंधकार ही अंधकार है। उजाले की ओर बढ़ने के लिए अब एक होकर कुछ तो करो।

जो अम्बेडकरवादी हैं, वे सामान्यतया भगवान बुद्ध को ही मानते हैं। भगवान बुद्ध ने कहा था कि जो कसौटी पर न खरी उतरे, उसे मत मानना उन्होंने यहां तक कहा था कि उनकी भी बात जब तक कसौटी पर खरी न उतरे न मानी जाए। ये उन साथियों के लिए हैं, जो अनुसूचित जाति/जन जाति संगठनों का अखिल भारतीय परिसंघ के साथियों के बलिदान को बिना जाने आलोचना करते रहते हैं। इस समय डॉ0 उदित राज की बड़ी आलोचना इस बात को लेकर हो रही है कि वे भाजपा चले गए हैं। क्या भारतीय जनता पार्टी में जाकर चापलूसी कर रहे हैं? या स्वयं के स्वार्थ की सिद्धि कर रहे हैं? बाबा साहेब डॉ0 अम्बेडकर पूरे जीवन कांग्रेस को कोसते रहे। भारत-पाक बंटवारे के उपरांत जब उनकी संविधान सभा की सदस्यता समाप्त हुई तो कांग्रेस ने अपने महाराष्ट्र के मंत्री पीपुल जैकर का इस्तीफा दिलवाकर वहां से बाबा साहेब को चुनवाकर संविधान सभा में भेजा। उसके बाद बाबा साहेब को न केवल कानून मंत्री बनने का अवसर मिला बल्कि संविधान निर्मात्री सभा के अध्यक्ष भी बने। कांग्रेस में जाकर उन्होंने समाज के लिए किया तो डॉ. उदित राज भारतीय जनता पार्टी में जाकर समाज की जो लड़ाई लड़ रहे हैं, कैसे गलत हैं? तीन साल के उनके द्वारा संसद में उठाए गए मुद्दे एवं कार्यों को देखने के बाद अगर व्यक्ति बेईमान और पूर्वाग्रहित नहीं है तो निश्चित तौर से सराहना किए बिना नहीं रह पाएगा।

यदि समाज का सहयोग मिलता तो जिस तरह से पहले परिसंघ द्वारा अधिकार सुरक्षित कराए गए है, भविष्य में अवश्य होंगे।

***

लैब में लिखा जा रहा है इतिहास

चंद्रभूषण

इतिहास के दायरे में अब तक की सबसे बड़ी क्रांति दुनिया का दरवाजा खटखटा रही है। इस क्रांति का जरिया बनी है जेनेटिक्स, जो पिछले कुछ वर्षों में सूचना क्रांति के विस्फोट से मिलकर अतीत के अध्ययन का एक चमत्कारिक औजार बन गई है। जर्मनी के मैक्स प्लैंक इंस्टीट्यूट के 62 वर्षीय स्वांते पाबो को इसी साल फरवरी में हार्वर्ड यूनिवर्सिटी (अमेरिका) के 43 वर्षीय डेविड राइख के साथ दस लाख डॉलर का डैन डेविड पुरस्कार मिला है। स्वांते पाबो का काम इंसानों से मिलती-जुलती जीवजाति निएंडरथल्स पर है, लेकिन विलुप्त जीवों की जेनेटिक्स पढ़ने की जो तकनीक उन्होंने ईजाद की, उसे डेविड राइख अपने ही नाम पर बनी प्रयोगशाला में इंसानी इतिहास पर आजमा रहे हैं। उनकी प्रयोगशाला से आ रहे शोधपत्रों की भाषा अभी तकनीकी शब्दावली से लदी है, लिहाजा दुनिया भर के विश्वविद्यालयों के इतिहास और वृत्तत्वशास्त्र विभागों पर उनका सीधा असर नहीं देखने को मिल रहा। लेकिन आगे चलकर यह दृश्य बदल जाएगा और इतिहास की ज्यादातर प्रस्थापनाओं को जेनेटिक्स की कसौटी पर परखना जरूरी हो जाएगा।

डेविड राइख बताते हैं कि उनके देखते-देखते जेनेटिक्स के अध्ययन का काम एक लाख गुना सस्ता हो गया है। बदलाव की रफ्तार का अंदाजा इस बात से लगाया जा सकता है कि 2010 से 2017 के बीच सिर्फ सात वर्षों में इंसानी प्रागैतिहास का खाका पूरी तरह बदल चुका है। 2010 से पहले ऐसा माना जाता था कि मध्य अफ्रीका से उठकर उत्तर की तरफ आए इंसानी पूर्वजों (होमो सैपिएंस) की मुलाकात लगभग 50 हजार साल पहले यूरोप के निएंडरथल कबीलों से हुई, जो तकनीकी और दिमागी तौर पर उनसे कमजोर थे। अगले दस हजार वर्षों में होमो सैपिएंस ने निएंडरथल्स का सफाया कर दिया और खुद यूरोप समेत पूरी दुनिया में फैलते चले गए। लेकिन स्वांते पाबो ने अकेले दम पर यह साबित किया कि निएंडरथल्स के काफी सारे अवशेष आधुनिक मनुष्यों की जेनेटिक्स में भी मौजूद हैं। यानी एक जीवजाति के रूप में भले ही निएंडरथल्स का खात्मा हो गया हो, लेकिन उनकी छाप इंसानों में आज भी देखी जा सकती है।

2010 में ही चीन और मंगोलिया की सीमा से लगने वाली साइबेरिया की एक गुफा में उंगली की एक हड्डी बरामद हुई, जिसके बारे में पता चला कि यह 41 हजार साल पुरानी किसी लड़की की है। संयोगवश, इस हड्डी से ठीक-ठाक स्थिति में डीएनए भी प्राप्त हो गया, जिसके अध्ययन ने वैज्ञानिकों को एक विचित्र निष्कर्ष तक पहुंचा दिया। यह हड्डी भी इंसान जैसे ही किसी जीव की थी, जो न होमो सैपिएंस में आता था, न निएंडरथल्स में। 2015 में इस गुफा से इसी जीवजाति के दो दांत भी मिल गए, इस तरह डेनिसोवन नाम की तीसरी इंसानों जैसी जीवजाति का पता चला। इस सिलसिले में सबसे अजीब काम रहा डेविड राइख का, जो यूरोप और मध्य एशिया के लोगों के जेनेटिक ढांचे की कंप्यूटर एनालिसिस से इस नतीजे पर पहुंचे कि अब से 40 हजार साल पहले यहां इंसानों से मिलती-जुलती दो और जीवजातियां मौजूद थीं, जिनका कोई अवशेष अब तक पाया नहीं जा सका है। इन्हें अभी गोस्ट पीपल (भूतिया जनसमूह) कहा जा रहा है।

हार्वर्ड युनिवर्सिटी की राइख लैब का सबसे ज्यादा काम अभी कजाखिस्तान पर चल रहा है, जिसे चीन, यूरोप, दक्षिण एशिया और पश्चिम एशिया के बीच आवाजाही का चौराहा माना जाता रहा है। डेविड राइख का कहना है कि यहां की जेनेटिक स्टडीज के जरिये एशिया और यूरोप के इतिहास से जुड़ी कई अनसुलझी गुत्थियां सुलझ सकती हैं। इस लिहाज से दुनिया में सबसे ज्यादा उलझी हुई गुत्थी भारतीय समाज को ही माना जाता है। रूप-रंग, आचार-व्यवहार और भाषा का जितना वैविध्य भारत में है, उसकी और कहीं कल्पना भी नहीं की जाती। अंग्रेजी राज में यहां आर्य-द्रविड़ टकराव की थीसिस ने जोर पकड़ा, जिसकी धमक आज भी अकेडमिक्स से लेकर सत्ता राजनीति तक देखी जाती है। इस बारे में मैक्स प्लैंक इंस्टीट्यूट से कुछ बेहद दिलचस्प पेपर प्रकाशित हो चुके हैं।

उन्नीसवीं सदी में भाषा को आधार बनाकर किए गए अध्ययनों के आधार पर संस्कृत का रिश्ता यूरोपीय भाषाओं जोड़ा गया, जिसकी विकृत परिणति नाजी जर्मनी में आर्यन रेस थिअरी के रूप में देखने को मिली। लेकिन कुल मिलाकर यह कहीं का ईंट कहीं का रोड़ा जोड़कर गढ़ी गई एक कहानी ही थी। दुनिया के सारे मनुष्य आपस में किसी न किसी रूप में जुड़े हुए हैं लेकिन उनके जुड़ाव-अलगाव का इतिहास अधिक वैज्ञानिक ढंग से लिखा जाना चाहिए। भाषा एक इसमें पहलू हो सकती है। प्राचीन ग्रंथों की शक्ल में मौजूद भाषिक रचनाएं भी इसमें कुछ ब्यौरे उपलब्ध करा सकती हैं। लेकिन फसलों, जानवरों और उपकरणों का अध्ययन, सबसे बढ़कर जेनेटिक्स की समझ इसे एक ऐसी पुख्ता शक्ल दे सकती है, जिसके बाद जातीय गौरव की कई कहानियां बेमानी हो जाएंगी।

डेविड राइख और स्वांते पाबो ने अपने काम से यह साबित किया है कि इंसानों का इतिहास खुद में इंसानों जैसे कुछ पूर्ववर्ती जीवों का इतिहास भी समेटे हुए है। उनका विनाश इंसानी महागाथा का एक पहलू है, तो दूसरा पहलू उनके अवशेषों को खुद में समाहित करने का भी है। इतिहास भले ही आज हमारे लिए राजनीतिक विवाद का विषय बना हुआ हो, लेकिन उम्मीद करें कि टेक्नॉलजी के बल पर अगले बीस-पचीस वर्षों में ऐसे विवादों की गुंजाइश बहुत कम रह जाएगी।

– नवभारत टाइम्स (9 सितम्बर, 2017) से साभार

***

The British Raj gave us a sense of nationhood but it's now under threat

By Sunanda K Datta-Ray

Murli Manohar Joshi, a rare politician I hold in considerable affection, once told me that common installations and institutions all over India testify to ancient unity. I urged him to write about this evidence of India having been a country before British rule because to my mind the principal legacy of the Raj lies not in artefacts and innovations like the railways or judiciary but in the sense of India as a single country and of a shared Indian nationality. No Indian language has a natural word for either the country or its people. Bharat's elevation lies in the Constitution's "India that is Bharat". Hindustan and Hindu are probably accurate from a purely semantic point of view since they are geographic descriptions referring to the river and not the Sanatan Dharma. But vehement propaganda has so thoroughly degraded the language that it is impossible now to separate either term from the political "Hindutva". How we think of ourselves is important as a measure of the transition from medievalism to modernity which is part of Britain's gift to us. Indonesia's ethnic Chinese were grossly underestimated under Dutch rule because illiterate Han settlers had no concept of Chineseness. They thought of themselves as Hakka or Teochew and were listed by dialect, just as we thought of ourselves (and some still do!) as Tamil or Maratha.

Two factors shaped the Indian identity in colonial times. In neither case was it a conscious British effort. In fact, the upsurge of 1857 showed that Hindu and Muslim could respond unitedly to the message of the circulating chapati whose mystery has still not been solved and treat Bahadur Shah as a national symbol in contradistinction to our foreign rulers. But the British government's administrative and security priorities, its legal and educational systems, communications, and market economy also played a major part in welding India's many nations into a single political state. Of course this was tailored to an imperial purpose. As Penderel Moon wrote, India was "the largest foreign market that any country has ever been able to control for its own advantage". But however selfish the reason, the end result was an Indian nation.

The more showy appurtenances of modernity are relatively less important because countries that have waxed rich on the discovery of oil show how easy it is to buy them. Dubai's Burj Khalifa doesn't transform the Persian Gulf state into New York just as Mamata Banerjee's Kolkata hasn't become London because it sports a replica of Big Ben. Kolkata — or, rather, Calcutta — was probably closer to London in the 19th century when the educated elite of both capitals moved in tandem, exchanging thoughts and ideas across the gulf of time and space. That wouldn't have been possible without Macaulay's famous Minute on education which lent official support to the aspirations of a reformer like Raja Rammohun Roy who was convinced, despite his own erudition in Sanskrit and Persian, that the future lay in English. Access to contemporary Western thought and literature was part of the liberalising process for a culture that had for centuries looked inwards, gloating over memories of past achievements that became more mythic as time went on. It was no longer animated by any awareness of other cultures or any sense of competition with them. For all its exploitative faults, colonialism had a wonderfully liberating effect on the stagnant mind of India.

Paradoxically, the twin forces of British promotion and resistance to British rule helped to shape the same sense of national identity. Aravind Akroyd Ghose — later revered as Sri Aurobindo — demonstrated that the most Anglicised Indians were often the most patriotic. One of the very first of the breed, Behari Lal Gupta, risked his coveted position as an early (1871) Indian covenanted member of the Indian Civil Service by protesting that Indian judges were not allowed to try Europeans. As whites hysterically objected to judicial reform, a public meeting in Bombay in 1883 strongly articulated national sentiment above sectarian divisions. Bombay's Nakoda Mohammad Ali Rogay declared to loud cheers that the British were trying to dismiss Gupta's demand for parity among all judges regardless of race as being "confined to Bengali Baboos only". "But", Rogay warned, "they forget that a question which affects Bengali Baboos affects all the natives of India." It was a brave assertion of a common identity and a shared purpose. Other British gifts are subject to deterioration. Judges are dilatory, the civil service is corrupt. The railways and post office have succumbed to neglect. Misfortunes of many kinds can and do befall other legacies. Jagat Mehta, a former foreign secretary, thought Singapore was the only ex-colony to have preserved what it inherited. India's acquired sense of nationhood not only sustains a vigorous independence but, ironically, it also inspires Hindutva champions to look back at the frontiers of the Raj and yearn for an "Akhand Bharat" that existed only under British rule. The greater irony is that the sense of nationhood Britain generated eventually defeated the British. Whether it will save India from the looming threat of a narrowly majoritarian definition of nation and nationhood remains to be seen.

Joshi's article might have helped to establish if any kind of pan-Indian unity did precede the British. Sadly, he never wrote it.

http://timesofindia.indiatimes.com/home/sunday-times/all-that-matters/the-british-raj-gave-us-a-sense-of-nationhood-but-its-now-under-threat/articleshow/60341301.cms

***

दलित छात्र को बंधुआ मजदूर बना करवाते थे कुत्ते की मालिश

इस तरह की तमाम घटनाओं के बाद अब आगरा के एक स्कूल की घटना सामने आई है। यहां के एक स्कूल में दलित छात्र के शोषण की घटना सामने आई है। 10 में पढ़ने वाले एक छात्र स्कूल अधीक्षक ने उसे आगरा से दूर गाजियाबाद सीनियर अधिकारी के घर भेज दिया। वहां अधिकारी छात्र से शौचालय साफ करवाता था। कुत्तों की मालिश करवाता था। दरअसल, समाज कल्याण विभाग की सहायता से आश्रम पद्धति पर चलने वाले स्कूल में पढ़ रहे 14 साल के छात्र के मालिश करने के हुनर से खुश होकर स्कूल अधीक्षक ने उसे सीनियर अधिकारी के यहां गाजियाबाद भेज दिया। पीड़ित छात्र का आरोप है कि उसे फ्लैट पर बंधुआ मजदूर के रूप में शौचालय साफ करना पड़ता था। साहब के कुत्तों की मालिश करनी पड़ती थी। वह करीब सवा महीने बाद किसी तरह वहां से भागकर अपने घर

आगरा पहुंचा। पूरे मामले की शिकायत जिलाधिकारी से की गई है। वहीं, आरोपी अधिकारी का कहना है कि उनका गाजियाबाद में तो कोई फ्लैट ही नहीं है।

आगरा के सैंया ब्लॉक के सिंकदरपुर गांव का एक किशोर राजकीय स्वच्छकार आश्रम पद्धति विद्यालय इटौरा में 10वीं कक्षा का छात्र है। पीड़ित छात्र के पिता नाई का काम करते हैं। पीड़ित छात्र का कहना है कि वह मालिश का काम जानता है। छात्र का आरोप है कि स्कूल अधीक्षक खुद अपनी मालिश करवाते रहे और फिर आगरा के जिला समाज कल्याण अधिकारी के गाजियाबाद वाले फ्लैट पर लेकर गए। उसे वहां छोड़कर स्कूल अधीक्षक वापस आगरा लौट आए। पीड़ित छात्र ने बताया है कि गाजियाबाद स्थित अधिकारी के फ्लैट पर उससे घर का पूरा काम करवाया जाता था। यहीं नहीं कुत्तों को नहलाने और उनके बालों में कंघी करने का काम भी उसी से कराया जाता था। छात्र का आरोप है कि अधिकारी के घर पर उसे पेट भर खाना भी नहीं दिया जाता था। पूरे घर का काम करने के बदले में कोई मेहनताना भी नहीं दिया जाता था। सुबह 6 बजे से लेकर देर रात तक उससे काम कराया जाता था। मौका मिलते ही घर का कचरा फेंकने के बहाने वह फ्लैट से भागकर दिल्ली और फिर वहां से किसी तरह आगरा आ पहुंचा। छात्र ने पूरा घटनाक्रम अपने परिजनों को बताया तो उन्होंने मामले की शिकायत स्कूल प्रशासन और उप निदेशक समाज कल्याण से की, लेकिन दोनों ही जगह से कोई कार्रवाई नहीं हुई।

एक सामाजिक संस्था 'महफूज' के नरेश पारस ने उसकी आपबीती सुनी और वह परिजनों के साथ छात्र को लेकर एडीएम सिटी के पास पहुंचे। उन्होंने एक शिकायती पत्र देकर पूरे मामले की जांच की मांग की। एडीएम सिटी केपी सिंह का कहना है कि छात्र के आरोपों की जांच की जा रही है। मामले में तथ्य प्रकाश में आने पर संबंधित अधिकारी के खिलाफ कार्रवाई की सिफारिश की जाएगी। छात्र और उसके परिजनों ने राष्ट्रीय बाल अधिकार संरक्षण आयोग और मुख्यमंत्री के जनसुनवाई पोर्टल पर भी अपनी शिकायत दर्ज कराई है।

http://www.dalitdastak.com/news/student-labor-dog-massage-agra-up.html

***

Appeal to the Reeaders

You will be happy to know that the Voice of Buddha will now be published both in Hindi and English so that readers who cannot read in Hindi can make use of the English edition. I appeal to the readers to send their contribution through bank draft in favour of **"Justice Publication"** at T-22, Atul Grove Road, Connaught Place, New Delhi-110001. The contribution amount can also be transferred in **'Justice Publication' Punjab National Bank account no. 0636000102165381 branch Janpath, New Delhi** under intimation to use by email or telephone or by letter. Sometimes, it might happen that don't receive the Voice of Buddha. In that case kindly write to us and also check up with the post office. As we are facing financial crisis to run it, you all are requested to send the contribution regularly.

Contribution :
Five Year : Rs 600/-
One Year : Rs. 150/-

VOICE OF BUDDHA

Publisher : Dr. UDIT RAJ (RAM RAJ), Chairman - Justice Publications, T-22, Atul Grove Road, Connaught Place, New Delhi-110001, Tel: 23354841-42

● Year : 20 ● Issue 20 ● Fortnightly ● Bi-lingual ● Total Pages 8 ● 1 to 15 September, 2017

Independence and Society

Dr. Udit Raj

It has been 70 years to our independence. It should be checked how far we have reached in social, political, economic and educational fields. Generally, change is something which is not easily accepted by us. We change only in pressure or serious circumstances affecting us. This can be seen very clearly from the mindset of people regarding implementation of GST in the country. Many countries in the world have adopted GST and our countrymen still want more and more time for the same. Now it has been implemented from 1st July 2017 and is gaining acceptance all over the country. Similarly, in politics also some circumstance and desire make it mandatory to make changes. A comparative analysis will help us understand how much we have progressed in different aspects of life.

The field in which highest development and changes can been seen is the government machinery. Most changes can be seen in the legislature of the government machinery. Now the public representatives are always under public surveillance. In earlier days these public representatives very rarely met the people in their constituency but today they are accountable to the public for each and every day. Today each and every act of the representative and their family members demands an explanation from the public. The mass media is so fast and rapid that it spares none in reaching the conclusion or decision even before the actual courts does so. Joining politics by family members of a public representative raises various questions, but if family members of a doctor, lawyer, artist or businessman join their parent's profession then no questions are not raised. These circumstances only have led to a large change in the legislature and today whosoever wants to survive in the politics has to face tough competition. These changes also affect the bureaucracyas it works under the public representatives. Earlier the DM, Commissioner, S.P. worked from their offices only but today they are always running due to work and pressure from the higher authorities. The judiciary also has not only become more independent, but has shut people's mouths in the name of contempt.It is not accountable to the citizens, hence no special change is seen.

Until and unless there are changes in the society the main motive of independence cannot be fulfilled. There should be proper accounting of how far our society has reached in terms of changes and development. Even today it is standing at the same position where it was in the past. If this was not the situation then we would not have been running around to save the girl child, marriages would have been done without dowry and women would also have equal independence as men. Had women not been forced to carry the bundle of character on their head, then their participation and contribution would have been at par with the men inproduction, education and other fields. The problem of physical touch still existin the villages and in the cities it is prevalent in the mindset of the people. We blame the politics for such demise of our nation and close our eyes to the actual reasons behind such demise. Even after 70 years of Independence we have not reached where we should have been for which to blame is our society itself. Corruption in government is a common reason but greater freedom in democracy is also one of them. There are many countries on the world which have seen huge progress despite corruption in government machinery. In Japan, Korea and Singapore the politicians and officers at higher level have been prisoned because of corruption but this did not stop them progressing. The main reason for such progress is that the people always performed their duties themselves instead of leaving it to the government. Some people quote that development in China is due to the dictatorship government but do they have any answer for the development in Japan, South Korea and Singapore having democratic government?

The countries which accepted change in their society have only seen tremendous development. Every citizen performed their duties to the maximum. Rhetoric and reactionary traditions were removed from their roots. Progress in industrialization, knowledge-science, freedom of expression of the citizens, art-culture, politics and judicial system of all Europe came when there was a change in their society.There is no other bigger institution than society and unless changes are made in this institution, others will be left to a limit. This is our situation today.

***

Jai Bhim

Jai Bharat

National Conference of the Confederation

On 30 th Sept. & 1 st Oct. in New Delhi

All India confederation of SC/ST Organisations a National Conference from 30th September to 1st October'17 at Mawalankar Hall, Constitution Club of India, New Delhi. All office bearers, activists, members of the confederation and other intellectual have been invited to the conference. In this conference, it will be discussed how to deal with the crisis on Reservation. Reservation is on the verge of ending . To get reservation in private sector is also a big challenge . Problems of discrimination and atrocities faced will be discussed. All are invited to the discussion to find a solution to our problems. I believe that now days the Dalits are lying in the dark and their rights are being attacked. Where ever I go, I got to hear that reservation is ending, and it will end if we do not move out of our house in protest to protect our rights. It is a misconception that the rights are achieved only when in power. Baba Saheb did not have any power, still he secured the right of reservation for us. Gurjar, Jaat, Patels and Marathis also achieved Reservation after huge protest only. We will also by protest have saved the right to reservation and will keep saving it in the futures as well.

Dusherra will be celebrated on 30th September'17. It will be seen who is a true Ambedkarite and who is just pretending. Let's see whether Dusherra can stops the follower of Baba Saheb and Gautam Buddha. Will the power of Baba Saheb's vision and the pain of our society gather you all for the conference or the excuse of a long weekend holiday ? So I appeal to all to gather on 30th September'17 and 1st October'17 at Mawalankar Hall, Constitution Club, New Delhi at 10AM and participate in the conference. Proper arrangements for hall, food and stay for those who need it have been made at a very nominal participatory fees of Rs. 500 per person. For further information contact Shri Om Prakash Singhmar, Programme Convener Mob.9811358350, Shri Sanjay Raj, National Treasurer Mob.:9654142705, Sumit Kumar Mob.: 9868978306.

Dr. Udit Raj, National Chairman

Publisher, Printer and Editor - Dr. UDIT RAJ (FORMERLY KNOWN AS RAM RAJ), on behalf of Justice Publications, T-22, Atul Grove Road, Connaught Place, New Delhi-110001, Tel: 23354841-42, Telefax:23354843, Printed at Sanjay Printing Works, WZ-4A, Basai Road, New Delhi.
Website : www.uditraj.com E-mail: parisangh1997@gmail.com Computer typesetting by C. L. Maurya